कर्म - सिद्धांत की वैज्ञानिकता

❑ डॉ. जयन्तीलाल जैन, चेन्नई

जैनदर्शन में कर्म सिद्धांत का महत्व विशेषरूपेण प्रतिपादित है। जब तक जीवात्मा कर्म से बद्ध है तब तक संसार में भ्रमण करती रहेगी। कर्म निःशेष होने पर वही आत्मा परमात्म रूप बन जाती है। जीव की अवस्थाओं के परिज्ञान के लिए कर्मवाद को समझना अत्यावश्यक है। कर्म सिद्धांत की वैज्ञानिकता, त्रैकालिकता, सार्वभौमिकता को प्रतिपादित कर रहे हैं – डॉ. श्री जयन्तीलाल जी जैन।

– सम्पादक

जैन-दर्शन में सिद्धांत किसी के द्वारा बनाये या प्रतिपादित नहीं किये जाते हैं। ये सिद्धांत अरहंत या तीर्थकरों द्वारा प्ररूपित होते हैं। केवलज्ञान में जैसी विश्व-व्यवस्था झलकती है, वैसा ही भगवान् द्वारा बताया जाता है। भगवान् अपनी ओर से कोई सिद्धांत बनाते नहीं है, अपितु वे तो लक्ष्य को सिद्ध कर स्वयं आदर्श प्रस्तुत करते हैं। 'अंत' अर्थात् लक्ष्य जिससे 'सिद्ध' होता है, वही 'सिद्धांत' है। इस प्रकार समस्त जैन-दर्शन में प्ररूपित सिद्धांत परम वैज्ञानिकता को लिए हुए हैं, चाहे उन्हें कोई माने या न माने। कर्म का सिद्धांत जीव की संसार अवस्था का एक मूलभूत सिद्धांत है। जैन दर्शन में इसका इतना व्यापक, वैज्ञानिक, त्रैकालिक, सार्वभौमिक एवं अकाट्य निरूपण हुआ है, जितना अन्य किसी दर्शन में नहीं हुआ है। सभी जीवों की समस्त अवस्थाओं को समझने के लिए इस कर्मवाद का ज्ञान आवश्यक है।

विश्व-व्यवस्था व कर्म

इस विश्व में छः द्रव्य हैं – जीव, पुद्गल, आकाश, काल, धर्मास्तिकाय व अधर्मास्तिकाय। जीव चेतन लक्षण वाला है और अन्य पांच अजीव है। कर्म पुद्गल परमाणु रूप हैं और उस संबंधी जो जीव के भाव है वे भाव कर्म हैं। जो जीव विश्व-व्यवस्था को नहीं जानते, वे अज्ञान अवस्था रूप परिणमन करते हैं क्योंकि पुद्गलादि अन्य द्रव्यों का स्वरूप नहीं जानते। इस अचेतन रूप या अज्ञान रूप परिणमन से कर्मों का आस्रव है एवं बंध है। बंधे कर्म फिर समय पाकर उदय में आते हैं और बंध को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार अज्ञान चक्र से संसार परिभ्रमण है। जीव कर्म की प्रकृति, प्रदेश, स्थिति व अनुभाग के आधार पर चारों गतियों में भ्रमण करता है। जब जीव अपने शुद्ध स्वभाव अर्थात् कर्म-रहित स्वभाव का ज्ञान कर उसमें लीन होता है, उस रूप परिणमन करता है, तब आस्रव रुक जाता है, बंध नहीं होता, संवर व निर्जरा होते हैं और अंत में जीव मोक्षदशा को प्राप्त करता है, जहाँ कर्म के बंध का सर्वथा अभाव है।

उक्त शुद्धिकरण की जिनवाणी में त्रैकालिक वैज्ञानिक व्यवस्था है। अनंतजीवों ने भूतकाल में इसी वैज्ञानिक व्यवस्था को समझकर, उस रूप परिणमन कर मोक्ष दशा या सिद्ध दशा को प्राप्त किया है। वर्तमान में भी जीव इसी को जान कर मोक्ष की साधना करते हैं। भविष्य में भी वही जीव इस दशा को प्राप्त होते हैं जो जिनवाणी की इस शुद्धि करण की व्यवस्था के अनुरूप परिणमन करते हैं। छः द्रव्य एक दूसरे द्रव्य के गुण या पर्याय को उत्पन्न नहीं कर सकता है। इससे यह वैज्ञानिक सिद्धांत सिद्ध होता है कि प्रत्येक द्रव्य का परिणमन अपने से होता है। प्रत्येक द्रव्य के षट्कारक कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान व अधिकरण वह द्रव्य स्वयं ही है। इस प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक द्रव्य स्वयं चालित है और यह त्रैकालिक वैज्ञानिक व्यवस्था है।

कर्म का भेद-विज्ञान

जीव जो अनेक प्रकार के भाव या विचार करता है उसे विकल्प कहते हैं। विकल्प ही कर्म है और विकल्प का करने वाला कर्ता है। इस प्रकार जो जीव विकल्प सहित है, उसका कर्ता-कर्म भाव कभी नाश को प्राप्त नहीं होता है। जब जीव विकल्प करता है, उसी समय ज्ञानावरणादि कर्म द्रव्य कर्म रूप परिणमन करते हैं। इस प्रकार भाव कर्म व द्रव्य कर्म रूप कर्म के भेद किये जाते हैं। कर्म के द्रव्य कर्म, भाव कर्म व नोकर्म (शरीर आदि संबंधी कर्म) रूप तीन भेद भी किये जाते हैं। कर्म के शुभ (पुण्य) व अशुभ (पाप) ऐसे दो भेद भी किये जाते हैं। पुण्य कर्म से स्वर्गादि की प्राप्ति होती है और पाप से नर्रकादि की, लेकिन दोनों ही संसार के कारण हैं। जैसे लोहे की बेड़ी बंधन है, वैसे ही सोने की बेडी भी बंध का ही कारण है।

सामान्यतया कर्मों को आठ भागों में बांटा जाता है- ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय। वैसे इन ८ कर्मों के १४८ भेद भी किये जाते हैं। सचमुच देखा जाय तो कर्म के भेद तो अनंत हैं, जितने प्रकार के विकल्प होते हैं, उतने ही कर्म के भेद हो सकते हैं। जिनवाणी में कर्म का सूक्ष्म से सूक्ष्म विश्लेषण देखने को मिलता है।

कर्म के भेद एवं विश्लेषण के पीछे एक अनोखा वैज्ञानिक सत्य छिपा हुआ है और वह एक शुद्धात्मा या सिद्ध समान आत्मा का रहस्य उद्घाटन। जब विकल्प ही कर्म है तो विकल्प रहित अवस्था ही कर्म रहित अवस्था है। सिद्ध भगवान् के आठों कर्मों का नाश है क्योंकि उनकी सकल कर्मों से रहित की अवस्था है। कर्म के घाति व अघाति रूप में भेद किया जाता है। उक्त आठ कर्मों में प्रथम चार को घातिकर्म कहते हैं व शेष चार को अघाति, जो आत्मस्वभाव का घात करते हैं अर्थात् प्रगट न होने में बाधक या निमित्त होते हैं उन्हें घाति और जो बाधक नहीं हैं उन्हें अघाति। प्रथम चार के नाश होते ही अरहंत दशा प्रगट होती है और अन्य चार के नाश होते ही सिद्ध दशा की प्राप्ति होती है। हर कर्म के प्रतिपक्ष में आत्मा के एक गुण का प्रतिपादन है। अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, सम्यक्त्व, अनंतवीर्य, अगुरुलघुत्व, अवगाहनत्व सूक्ष्मत्व, अव्याबाधत्व। इस प्रकार कर्म के अवलम्बन से शुद्ध या सिद्ध आत्मा का प्रतिपादन ही जिनवाणी का लक्ष्य है। कर्म या कर्मफल में अति सावधान जीव की प्रवृत्ति कर्मचेतना या कर्म फल-चेतनारूप है, जो संसार का कारण है, यह अज्ञानचेतना है। इसका विनाश कर ज्ञान चेतना में प्रवृत्त होना मोक्षमार्ग है और उसका फल साक्षात् मोक्ष है।

कर्म के नाश का उपाय सरल व सहज है। जैसे अंधकार का नाश करने अंधकार को मारना, पीटना, भगाना, अनुष्ठान, उत्सव आदि करने की आवश्यकता नहीं है। अंधकार के बारे में ज्यादा सोचने या विचारने से भी अंधकार नहीं मिटता। मात्र प्रकाश या दीपक से अंधकार का नाश होता है। उसी प्रकार कर्म के अंधकार या आवरण से आत्मा दिखाई नहीं देता। जैसे ही जीव ज्ञानरूपी दीपक को अपने भीतर जलाता है, कर्म का अंधकार उसी समय नाश को प्राप्त होता है। विकल्प, विचार, बुद्धि व्यवसाय, मति, विज्ञान, चित, भाव या परिणाम – ये सब एकार्थवाची है। यह जीव स्व-पर के भेद विज्ञान के अभाव में, एक में दूसरे की मान्यतापूर्वक अनेक परिणाम करता रहता है जो झूठे हैं। जिनेन्द्र भगवान् ने अन्य पदार्थों में ऐसे आत्मबुद्धि रूप विकल्प छुडायें हैं, यही कर्म का नाश है। यही वैज्ञानिकता है – कर्म के सिद्धांत की। जैसे प्रकाश के उदय से अंधकार का नाश सहज व सरल है, वैसे ही ज्ञान के उदय से कर्म का नाश सहज व सरल है। कर्म स्वयं भाग जाता है, अंधकार की भांति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्य-कारण विज्ञान

किसी भी वैज्ञानिक व्यवस्था में कारण-कार्य का प्रतिपादन नितान्त आवश्यक है। जैसा कारण होता है, वैसा कार्य होता है। जैसा बीज होता है, वैसा ही वृक्ष होता है, यह व्यवस्था कारण-कार्य संबंध से जानी जाती है। कोई कहता है कार्य पुरुषार्थ से होता है, तो कोई काल से, तो कोई स्वभाव से, तो अन्य कोई कर्म से होता है, तो कोई होनहार से। वास्तव में देखा जाय तो कोई कार्य किसी एक के कारण से नहीं होता है, उक्त पांचों बातें अपना-अपना कार्य करते हैं, यही वस्तु स्वतंत्रता है, वैज्ञानिकता है या स्वचालित वस्तु-व्यवस्था है।

यह लोक कर्म योग्य पुद्गलों से भरा हुआ है लेकिन वे कर्म बंध के कारण नहीं है, क्योंकि ऐसा होता तो मोक्ष में भी सिद्ध भगवान् के कर्म बंध का प्रसंग बन सकता है। क्योंकि कार्मण वर्गणा तो सिद्ध शिला में भी हैं। मन, वचन व काय यदि कर्म बंध का कारण हो तो अरहंत भगवान् के भी बंध का प्रसंग बनता है क्योंकि उनके मन, वचन काय हैं। जीव का घात यदि कर्म बंध का कारण है तो साधु जो समिति आदि में तत्पर हैं, उनके भी आहार, विहार आदि में जीव हिंसा है। अतः उनको मोक्ष नहीं हो सकता क्योंकि बंध होता रहेगा। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि कर्म से जीव को बंध नहीं है। जीव के उपयोग में राग आदि के जो परिणाम हैं, उससे बंध होता है। जैसे कोई रेत में व्यायाम करे तो रेत उसके चिपकती या बंध नहीं करती है, लेकिन वही व्यक्ति यदि तेल मर्दन कर रेत में व्यायाम करे तो धूलिबंध का प्रसंग अवश्य बनता है।

मिथ्यात्व आदि कर्म का उदय होना, नवीन कर्म के पुद्गलों का परिणमन व बंधना और जीव का अपने अज्ञान भावरूप परिणमन – ये तीनों बातें एक साथ एक समय में होती है। तीनों स्वतंत्र अपने आप अपने रूप ही परिणमन करते हैं। कोई एक किसी अन्य का परिणमन नहीं करता। मिथ्यात्व, असंयम, कषाय व योग के उदय पुद्गल के परिणाम है और जीव अपने अज्ञान के कारण उस भाव रूप परिणमन करता है, नवीन पुद्गल उसी समय स्वयमेव ज्ञानावरणादि कर्म रूप परिणमन करते हैं और जीव के साथ बंधते हैं। इस तरह जीव स्वयं अपने अज्ञानमय भावों का कारण स्वयं ही होता है और कर्म का बंध करता है। ज्ञानी जीव की / चैतन्यमय आत्मा की मान्यता इतनी दृढ़ होती है कि वह कर्म, निमित्त, राग, पर्याय, अवस्था आदि किसी को भी महत्व नहीं देता। उसका सर्वस्व तो चैतन्यमय आत्मा है, उसमें लीनता ही मोक्ष का कारण है। यह कारण-कार्य वस्तु स्वतंत्रता का विज्ञान है।

कर्म सिद्धांत – एकान्तवाद

अन्य मतों में जैसे जगत् का कर्ता ईश्वर माना जाता है। वैसे ही, कर्म की एकान्तवादी मान्यता के अनुसार कर्म ही आत्मा को अज्ञानी करता है, क्योंकि ज्ञानावरणीय कर्म के उदय बिना अज्ञान की उत्पत्ति नहीं हो सकती है। उसी तरह कर्म ही आत्मा को ज्ञानी करता है क्योंकि ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से ऐसा होता है। कर्म से ही जीव सोता है क्योंकि निंद्राकर्म के उदय से जीव को नींद आती है और कर्म ही जीव को जगाता है क्योंकि निद्राकर्म के क्षयोपशम के बिना ऐसा नहीं हो सकता। **सातावेदनीय कर्म के उदय से जीव सुखी होता है और असातावेदनीय कर्म से जीव दुःखी होता है। मिथ्यात्व कर्म के उदय से जीव मिथ्यादृष्टि होता है और सम्यक्त्व कर्म के उदय से जीव सम्यक्दृष्टि होता है। चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से जीव असंयमी होता है। पुरुषवेद कर्म से जीव स्त्री चाहता है और स्त्री वेद कर्म के उदय से पुरुष की चाह होती है। कर्म ही जीव को चारों गतियों में भ्रमण कराता है। यश, धन, सन्तान, परिवार आदि सब कर्म के उदय से**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलता है। कर्म किसी को नहीं छोड़ता, चाहे निर्धन हो या धनवान, बड़ा व्यक्ति हो या छोटा, सामान्य व्यक्ति हो या तीर्थंकर, राजा या प्रजा। इस प्रकार जो कुछ शुभ-अशुभ होता है सब कर्म ही स्वतंत्र रूप से करता है। कर्म ही देता है, कर्म ही हरता है और कर्म से टिका रहता है।

यदि कोई जैन भी उक्त एकान्तवाद को मानता है, तो जैन और अन्य मतों में भेद नहीं रहता है। राग-द्वेष के भाव आत्मस्वभाव का निरंतर घात करते हैं परन्तु उनका कर्ता कर्म है जीव स्वयं नहीं, तो यह जैनों के सिद्धांत के विपरीत है। वे आत्मा के घातक हैं क्यों कि राग-द्वेष द्वारा आत्मा की निरंतर होती हुई हिंसा को नहीं जानते, अतः आत्मघाती हुए। जिनवाणी उन पर कोप करती है क्योंकि यह जिनवाणी का विरोध है। जिनवाणी तो कथंचित् कर्ता कहती है और वे सर्वथा कर्ता मानते हैं।

भगवान् आदिनाथ जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी थे, क्षायिक समकित के धनी थे। ८३ लाख पूर्व तक उन्होंने चारित्र ग्रहण नहीं किया और राज्य करते रहे। अज्ञानी की यह दलील होती है कि चारित्रमोहनीय कर्म के उदय के कारण उनको चारित्र प्रगट नहीं हुआ। परन्तु यह तर्क संगत नहीं है। स्वयं की पुरुषार्थ की कमजोरी के कारण उन्होंने चारित्र अंगीकार नहीं किया। कर्म के उदय के कारण उनके चारित्र का अभाव था, ऐसा कथन उपचार मात्र है। स्वयं की कमजोरी के साथ ही उस समय कर्म का उदय भी है, ऐसा मात्र ज्ञान कराया है।अन्यथा कर्म आत्मा से भी बड़ा हो जायेगा, स्वयं भगवान् बन जायेगा। वास्तविक चारित्र तो स्वयं अपनी चैतन्यमूर्ति भगवान् आत्मा में लीनतारूप परिणाम है, जिसके प्रचुर आनंद में जीव लीन हो जाता है, स्थिर रहता है, वही सच्चा चारित्र है। कर्म की क्रिया कोई चारित्र नहीं है।

उसी तरह एकान्तवादी ऐसा मानता है कि श्रेणिक राजा जो क्षायिक समकित थे, तीर्थंकर, प्रकृति को जिन्होंने बांधा था, परन्तु नरकगति नामकर्म को भी बांधा था, जिससे नरक में गये। यह मान्यता एकान्त है। स्वयं के उल्टे पुरुषार्थ के कारण उन्होंने नरक गति का बंध किया। प्रथम नरक में गये वे भी अपनी स्वयं की उस समय की योग्यता से गये। कर्म के कारण गये या कर्म उनको खींचकर नरक ले गया, ऐसा नहीं है, कर्म तो जड़ है, आत्म स्वभाव में इसका अभाव है। जिसका जीव में अभाव है, वह जीव को नुकसान कैसे कर सकता है? उसी तरह एक व्यक्ति व्यापार कर काफी धन कमाता है। वहां पैसा का आना या जाना, उसका तो आत्मा कदापि कर्ता नहीं होता, परन्तु इस धन संबंधी लोभ या माया के परिणाम का वह जीव कर्ता अवश्य है। इसी प्रकार अन्य अन्य जगह भी सर्व अवस्थाओं में ऐसा ही समझना।

कर्म सिद्धांत व स्याद्वाद

स्याद्वाद के अवलम्बन से अनेक जैन सिद्धांत परम वैज्ञानिकता को प्राप्त होते हैं। वस्तु को एकान्त से जो समझते हैं, वह मिथ्या है। जैन दर्शन तो वस्तु जैसी है वैसा मानता है। द्रव्य से नित्य व शाश्वत है और कर्म व अन्य द्रव्यों से स्वतंत्र व भिन्न है। पर्याय में कर्म के अभाव या सद्भाव के निमित्त से पलटता है, यह सत्य है, परन्तु वस्तु कथंचित् नित्यानित्यात्मक है। ऐसा जान कर नित्य पर दृष्टि करना और कर्म के संयोग से बदलती दशा है तो अवश्य, परन्तु लक्ष्य करने का विषय नहीं है।

जैसा कि ऊपर कहा गया कि जीव के अज्ञानमय भाव का होना व कर्म बंधने का काल एक ही है, उसमें भिन्नता का अभाव है। इसलिए जब उसका एक बंध पर्याय की अपेक्षा से देखने में आता है तो जीव कर्म से बंधा है, ऐसा एक पक्ष है। उसी समय यदि जीव व पुद्गल कर्म को अनेक द्रव्य या भिन्न द्रव्य की अपेक्षा देखा जाय तो दोनों बिल्कुल अलग-अलग हैं। इसलिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव कर्म से बंधा नहीं है, ऐसा दूसरा नय पक्ष है।

नय से देखने पर तीन प्रकार के दोष उत्पन्न होते हैं। नय ज्ञान सापेक्ष है, नय विकल्परूप है और नय अंश ग्राही है। नय कहते ही तीनों ही बातें सचमुच एक साथ आ जाती हैं। सापेक्ष होने से नय एक पक्ष या प्रतिपक्ष खड़ा करता है, जिससे विकल्प होता है और वह विकल्प तो अंश को ही ग्रहण करता है। विकल्प या अंश को जानने से और अधिक जानने की इच्छा होती है, आकुलता होती है – यही दोष है। इस प्रकार कर्म जीव की सापेक्ष दशा को बताने का कार्य वैज्ञानिक ढ़ंग से करता है, लेकिन वास्तव में देखा जाय तो जीव का कर्म से या नय से कोई संबंध नहीं है। आत्मा तो निराकुल, अतीन्द्रिय, आनंदमय व विकल्प रहित है और कर्म या नय पक्ष व प्रतिपक्ष से रहित है।

उपसंहार : भेद विज्ञान की वैज्ञानिकता

इस प्रकार एक आत्मा ही कर्म का कर्ता है और अकर्ता भी है – ये दोनों भाव विवक्षा से सिद्ध होते हैं। जब तक जीव को स्व-पर का भेद विज्ञान नहीं होता, तब तक आत्मा कर्म का कर्ता है। भेद विज्ञान होने के पश्चात् आत्मा शुद्ध विज्ञानघन समस्त कर्तापने के भाव से रहित एक ज्ञाता ही मानना। कर्म से भिन्न स्वरूप शुद्ध चैतन्यमय स्वभाव रूप आत्मा का भान होते ही कर्म का जीव अकर्ता है, ज्ञाता ही है। अज्ञानमय दशा में कर्म का कर्ता है और भेद विज्ञान होते ही अकर्ता सिद्ध होता है। जैनों का यही स्याद्वाद है और वस्तु स्वभाव भी ऐसा ही है। यह कोई कल्पना नहीं है। परन्तु जैसा वस्तु स्वभाव है, वैसा भगवान् की वाणी में स्याद्वाद शैली में कहने में आया है।

स्याद्वाद मानने से जीव को संसार-मोक्ष की सिद्धि होती है, यह सिद्धि ही वैज्ञानिकता है। एकान्त मानने से संसार व मोक्ष – दोनों का लोप हो जाता है। अज्ञान दशा में कर्म का कर्ता मानने से संसार सिद्ध होता है अर्थात् अनंत संसार में परिभ्रमण का कारण जीव की यह मान्यता है कि कर्म या राग भाव का कर्ता जीव है। ज्ञान भाव प्रगट होते ही कर्म का अकर्ता सिद्ध होता है, यही मोक्षमार्ग व मोक्ष है। कर्म का कर्ता मानने से नित्य संसार का प्रसंग बनता है, उसके प्रतिपक्ष मोक्ष का प्रसंग नहीं होता, अतः संसार-मोक्ष कुछ भी सिद्ध नहीं होता है और मोक्षमार्ग का लोप हो जाता है। इस प्रकार भेद विज्ञान द्वारा मोक्ष की सिद्धि ही कर्म सिद्धांत की वैज्ञानिकता है।

❑ डॉ. जयन्तिलाल जी जैन का जन्म १ मार्च १९४९ का है। गलियाकोट (डूंगरपुर - राजस्थान) के इस सपूत ने १९८० में अर्थशास्त्र में पी.एच.डी. ओकलाहोम स्टेट यूनिवर्सिटी यू.एस.ए. से की। १९७६ में अर्थशास्त्र में एम.ए. बने - विचिता स्टेट यूनिवर्सिटी यू.एस.ए. से। १९७१ में एम.ए. (अर्थशास्त्र) की परीक्षा स्वर्ण पदक (प्राप्त कर उत्तीर्ण की, उदयपुर विश्वविद्यालय से। भारत-सरकार के विभिन्न प्रतिष्ठानों में महत्वपूर्ण पदों पर पूर्व में कार्यरत जैन वर्तमान में इंडियन बैंक चेन्नै के महाप्रबंधक है। जैन दर्शन में गहरी अभिरूचि ! आत्मतत्त्व के गवेषक, विश्लेषक एवं व्याख्याता ! अब तक जैन-दर्शन विषयक कई आलेख प्रकाशित ! – सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org